हिंदी भाषा

राष्ट्र से संयुक्त राष्ट्र तक स्थापित होने की अभिलाषा

प्रस्तावना

10 जून, 2022 हिंदी भाषा के लिए ऐतिहासिक दिन साबित हुआ। इस दिन संयुक्त राष्ट्र महासभा में पारित बहुभाषावाद संबंधी एक प्रस्ताव में पहली बार हिंदी भाषा का उल्लेख हुआ। प्रस्ताव में बहुभाषावाद तथा समावेशन को बढ़ावा देने के लिए आधिकारिक भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की सहकारी कामकाज की भाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान की गई। यह संयुक्त राष्ट्र के कामकाज के तरीके में आये एक बड़े बदलाव का संकेत है। इस प्रस्ताव में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र के सभी ज़रूरी कामकाज और सूचनाओं को इसकी आधिकारिक भाषाओं के अलावा दूसरी भाषाओं जैसे- हिंदी, बांग्ला और उर्दू में भी जारी किया जाए। संयुक्त राष्ट्र महासभा की छह आधिकारिक भाषाएँ हैं। ये हैं- अंग्रेज़ी, अरबी, चीनी, फ्रेंच, रूसी और स्पेनिश।

भारत सरकार ने हिंदी के प्रचार-प्रसार को उच्च प्राथमिकता दी है और संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर इसकी मान्यता और इसके प्रयोग में वृद्धि के लिए निरंतर उपाय कर रही है। हिंदी पहले से ही यूनेस्को की नौ कामकाजी भाषाओं में से एक है। वर्ष 2018 से ही भारत संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक संचार विभाग के साथ साझेदारी कर रहा है। इसका लक्ष्य हिंदी भाषा में संयुक्त राष्ट्र की पहुँच को बढ़ाना और दुनियाभर में हिंदी

बोलने वाले लोगों को जोड़ना है। संयुक्त राष्ट्र की वेबसाइट और इसके इंटरनेट मीडिया खातों के माध्यम से हिंदी में संयुक्त राष्ट्र के समाचार पहले से ही प्रसारित किए जा रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र से संबंधित समाचार निम्नलिखित प्लेटफार्मों के माध्यम से हिंदी में प्रसारित किया जाता है:- यू.एन. न्यूज की वेबसाइट (https://news.un.org/hi/),, ट्विटर हैंडल @Uninhindi, इंस्टाग्राम हैंडल unitednationshindi, यू.एन. फेसबुक हिंदी पेज, और एक साप्ताहिक यू.एन. न्यूज-हिंदी ऑडियो बुलेटिन-(https://soundcloud.com/un-news-hindi)।

यू.एन. हिंदी सोशल मीडिया अकाउंट ट्विटर पर 50000 इंस्टाग्राम पर 29000 और फेसबुक पर 15000 फॉलोअर्स हैं। इन माध्यमों पर हर साल करीब 1000 पोस्ट प्रकाशित होती हैं। हिंदी यू.एन. न्यूज वेबसाइट 13 लाख वार्षिक इंप्रेशन के साथ इंटरनेट सर्च इंजन में शीर्ष दस में अपना स्थान बनाए हुए है। ज्ञातव्य है कि हिंदी पहले से ही संयुक्त राष्ट्र संघ की शैक्षिक इकाई, यूनेस्को की नौ कामकाजी भाषाओं में शामिल है।

भाषते इति भाषा

भाषा मुख से उच्चारित होने वाले शब्दों और वाक्यों का वह समूह है, जिनके द्वारा मन की बात संप्रेषित की जाती है। कहते हैं, 'भाषते इति भाषा'। यानी जो बोली जाए, वह भाषा होती है। मौखिक भाषा ध्वनियों का समुच्चय है जिसके जरिये किसी समाज या राष्ट्र के लोग अपने मनोगत भावों तथा विचारों का परस्पर आदान-प्रदान करते हैं।

भाषा के बारे में कहा जाता है कि वह भावों और विचारों की वाहिनी है। भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों एवं भावनाओं को व्यक्त करते हैं। भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची के अनुसार वर्तमान में कुल 22 भाषाओं को स्वीकृति प्रदान की गई है। ये हैं- असई, बांगला, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, औड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगू, उर्दू, सिंधी, बोडो, डोगरी, कोंकणी, मैथिली, मणिपुरी, संथाली तथा नेपाली। ये सभी भारतीय भाषाएँ हैं। भारत की संविधान सभा ने 14 सितंबर, 1949 को खड़ी बोली में देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया था। वह भारत संघ के कामकाज की भाषा बनी। उस समय यह तय किया गया था कि हिंदी का प्रचार-प्रसार, सामाजिकता तथा इसकी सर्वस्वीकार्यता के लिए प्रयास किए जाएंगे। सहूलियत के लिए अगले 15 वर्षों तक सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में अंग्रेज़ी को कायम रखने का प्रावधान किया गया। लेकिन उसके बाद समय-समय पर राष्ट्रपति के अध्यादेश के अनुसार अंग्रेज़ी को सरकारी कामकाज के लिए विस्तार मिलता गया। इससे हिंदी की अनिवार्यता तथा उसके सशक्तिकरण पर उतना जोर नहीं दिया जा सका। नतीजा यह हुआ कि हिंदी को वह स्थान आज तक नहीं मिल सका जो उसे कभी का मिल जाना चाहिए था।

जनभाषा हिंदी

हिंदी सच्चे अर्थों में भारत की जनभाषा है। वह एक मज़बूत संपर्क भाषा है। वह जन-जन की भाषा है, चाहे वह किसी भी वर्ग, समुदाय, या संप्रदाय का हो। हिंदी प्रायः उत्तर-मध्य भारत के सभी राज्यों में पढ़ी, लिखी, बोली तथा समझी जाने वाली भाषा है। उत्तर-पूर्व, पश्चिम, तथा दक्षिण के राज्यों में भी हिंदी बड़ी मज़बूती से मौजूद है। तीर्थयात्रियों, सैलानियों के लिए यह परस्पर संवाद की भाषा है। समूचे भारत में कहीं भी चले जाएँ, हिंदी से काम चल जाता है। हिंदी सदा से साधु, संतों, महात्माओं, प्रवचनकर्ताओं, की भाषा रही है। लेकिन जब हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की बात चल रही थी, तो कुछ लोगों ने हिंदी का इसलिए विरोध किया, क्योंकि उन्हें लगा कि इससे दूसरी भाषाओं का अहित होगा। जब कि राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की परिकल्पना इस रूप में ही की गई थी कि अपने-अपने राज्यों में प्रांतीय भाषाएँ ही अपने पूरे अधिकार के साथ अपनी-अपनी प्रभावी भूमिकाएँ निभाएँगी। जो भूमिका हिंदी की हिंदीभाषी राज्यों में होगी, वहीं भूमिका हिंदीतर प्रांतों में उनकी अपनी-अपनी क्षेत्रीय भाषाओं की होगी।

राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी, अन्य भारतीय भाषाओं के साथ उनका तालमेल बनाने में मददगार होगी। जहाँ उनका अधिकार होगा, वहाँ तो हिंदी का कोई दखल होगा ही नहीं। लेकिन कुछ निहित स्वार्थी तत्वों के दुराग्रह के चलते हिंदी पर राजनीति की गई, तथा दुष्प्रचार किया गया। ऐसे ही कुछ लोगों ने अंग्रेज़ी को सीने से चिपका कर रखा है। उन्हें अंग्रेज़ी पर आपत्ति नहीं थी, लेकिन हिंदी से विरोध था। अंग्रेज़ी भाषा, हिंदी सहित समस्त भारतीय भाषाओं को नुकसान पहुँचा रही है।

राष्ट्रभाषा के मायने

कहावत है, राष्ट्रभाषा के बिना कोई राष्ट्र गूँगा है। राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती है। आज़ादी के पहले से लेकर आज तक देश के सभी राष्ट्रनायकों तथा महापुरुषों ने देश के लिए राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की वकालत की है। अफ़सोस, कि हिंदी को उसका वाज़िब हक आज तक नहीं मिल सका है। धीरे-धीरे लोग निराश होते जा रहे हैं। भाषा की जातीय चेतना कमजोर हो रही है। स्वभाषा के प्रति अनुराग कम होता जा रहा है। हिंदी की जातीय चेतना का ह्रास हो रहा है। वैसे भी बहुत से लोग यह मानते हैं कि हिंदी-भाषी प्रांतों में भाषायी चेतना का अभाव हमेशा से रहा है। आखिर ऐसे कितने लोग हैं, जो हिंदी को अपनी भाषा के रूप में मानते हुए गर्व का अनुभव करते हैं। उत्तर तथा मध्य भारत के प्रांतों की बोर्ड की परीक्षाओं में हर साल लाखों छात्रों का हिंदी विषय में फेल होना यह क्या साबित नहीं करता है कि हिंदी की पढ़ाई-लिखाई का स्तर कहाँ पहुँच गया है। हिंदी प्रदेशों के छात्रों के लिए एक विषय के तौर पर हिंदी गौण होती जा रही है। वे उसे सिर्फ परीक्षा के समय थोड़ा बहुत पढ़कर पास हो जाना चाहते हैं। उन्हें हिंदी के लेखकों, कवियों, उनकी कृतियों तथा साहित्यिक अवदानों से बहुत ज़्यादा लेना-देना नहीं है। वे हिंदी साहित्य में गहरे उतरने की इच्छा नहीं रखते। इन सबके सामाजिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक कारण हैं।

राष्ट्रभाषा का प्रश्न

महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने महात्मा गांधी को एक सम्मेलन के लिए भेजे गए पत्र में कहा था कि 'भाषा माता के समान है। माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए, वह हम लोगों में नहीं है। हमें अब अपनी मातृभाषा की और उपेक्षा करके उसकी हत्या नहीं करना चाहिए।' महात्मा गांधी देश की राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को स्थापित करने के प्रबल समर्थक थे और इस रूप में अंग्रेज़ी से उनका जबर्दश्त विरोध भी था। वे कभी नहीं चाहते थे कि देश को हम अंग्रेज़ों से तो आज़ाद करा लें, लेकिन अंग्रेज़ी के आगे नतमस्तक रहें। इसका कारण एकदम सीधा था। अंग्रेज़ी प्रभु वर्ग की भाषा थी और आज भी वह अपने इस अभिजात्य चरित्र को बनाए हुए है। महात्मा गांधी जी ने सन् 1914, में दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर पुरुषोत्तम दास टंडन को एक पत्र में लिखा था, 'मेरे लिए हिंदी का प्रश्न तो स्वराज का प्रश्न है।' इसके बाद गाँधी जी ने दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार सभा के द्वारा हिंदीतर भाषी प्रांतों में राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार-प्रसार कराया। गांधी जी समझते थे कि पूरे देश की जनता को अंग्रेज़ी सिखा पाना न तो संभव होगा, और न ही उचित। ऐसे में देश में कभी भी असली स्वराज नहीं आ सकता। सिर्फ शासक वर्ग का रंग बदलेगा, मानसिकता नहीं। यह आज के भारत की एक कड़वी सच्चाई है।

इस सच्चाई को स्वतंत्रता के 76 साल बाद गांधी जी के उस कथन में देखा जा सकता है- "अगर स्वराज अंग्रेज़ी बोलने वाले भारतीयों का और उन्हीं के लिए होने वाला है तो बेशक अंग्रेज़ी ही राष्ट्रभाषा होगी। लेकिन अगर स्वराज देश के करोड़ों भूखों, निरक्षर भाई-बहनों और दलितों तथा वंचितों का हो, और इन सबके लिए होने वाला हो, तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है।" विश्व के प्रायः सभी देशों ने अपने ही देश की भाषा को शिक्षा-दीक्षा के लिए स्वीकार किया। यूरोप के स्विट्जरलैंड सरीखे नन्हे से देश ने भी अपनी भाषा को अपने यहाँ शिक्षा का माध्यम बनाया है। भारत में अंग्रेज़ी को बढ़ावा देने के पीछे ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन रहा है। अट्ठारहवीं सदी के अंत तक हिंदुस्तान में अंग्रेज़ी राज को मज़बूती देने के लिए बड़ी संख्या में कर्मचारियों और बाबुओं की आवश्यकता महसूस की गई। उच्चाधिकारियों के स्तर पर तो अंग्रेज़ों की ही नियुक्ति होती थी, मगर निचले स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में अंग्रेज़ों की

नियुक्ति संभव नहीं थी। इस मज़बूरी में भारतीयों को अंग्रेज़ी में शिक्षित करने के बारे में सोचा गया। लार्ड मैकाले इस विचार का प्रणेता था जिसने भारतीयों को सदा के लिए मानसिक गुलाम बनाना चाहा था। वह भारतीयों के बीच से ही एक ऐसा वर्ग पैदा करना चाहता था, जो तन से हिंदुस्तानी होगा, लेकिन मन से अंग्रेज़। उसका मकसद भारत में ऐसी शिक्षा-व्यवस्था कायम करना था जिससे भारतीय जीवन-शैली और लोक-संस्कृति का पश्चिमीकरण हो जाए।

औपनिवेशिक नीति में हिंदी

लार्ड मैकाले की नीति बहुत ही स्पष्ट थी। उसकी सोच थी कि अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रचार-प्रसार कर भारतीयों को मात्र उतनी ही शिक्षा दी जाए, जिससे कि वे अच्छे नौकर साबित हो सकें। वह चाहता था कि पढ़ा-लिखा भारतीय विचारों से बिलकुल पश्चिमपरस्त हो जाए। भारतीय केवल खून और रंग की दृष्टि से हिंदुस्तानी हों! किंतु अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों की दृष्टि से अंग्रेज़ हों। अफ़सोस की बात यह है कि आज देश में अंग्रेज़ी भाषा का साम्राज्यवाद फिरंगियों के चले जाने पर भी कायम हैं। हम देख रहे हैं कि धीरे-धीरे हिंदी माध्यम के विद्यालय पिछड़ते जा रहे हैं तथा उनकी अनदेखी हो रही है। उसके विपरीत शहरों में गली, मुहल्लों, छोटे नगरों, कस्बों तथा गाँवों तक में जगह-जगह अंग्रेज़ी माध्यम के तथाकथित कॉन्वेंट स्कूल बहुत तेज़ी से खुल रहे हैं। यह दीगर बात है कि ज़्यादातर इन कांवेन्ट स्कूलों में खुद अंग्रेज़ी भाषा के साथ-साथ अन्य विषयों के पठन-पाठन का स्तर दयनीय है। हिंदुस्तानी समाज में अंग्रेज़ी माध्यम से शिक्षा का मोह किस कदर गहरा होता जा रहा है, यह एक नितांत विचारणीय विषय है। एक भ्रांति जो प्रायः अंग्रेज़ीदां लोगों द्वारा जोर-शोर से फैलाई जाती रही है, वह यह है कि हिंदी अभी इतनी संपन्न नहीं है कि उसमें उच्च शिक्षा तथा शोध किया जा सके। सच्चाई यह है कि आज हिंदी में विज्ञान तथा तकनीकी की पुस्तकें बहुत हैं। तकनीकी शब्दों के लिए शब्दावली आयोग द्वारा तमाम विषयों के लिए पारिभाषिक शब्दकोश तैयार किए गए हैं। हिंदी में ढेरों शब्दकोश, समांतर कोश, पारिभाषिक कोश तैयार हो चुके हैं। हिंदी की शब्द-संपदा 9 लाख के ऊपर है। ज़रूरत सिर्फ़ इच्छा शक्ति की है। यदि संकल्प हो तो विज्ञान, प्रौद्योगिकी सहित तमाम व्यावसायिक पाठ्यक्रम तथा पढ़ाई हिंदी माध्यम में संभव है।

हमारे देश का शिक्षित वर्ग अंग्रेज़ी के मकड़जाल में फँस गया है। उसे अपनी ही भाषा से अरुचि जैसी हो गई है। उसे यकीन है कि अंग्रेज़ी हमारे देश में सत्ता की भाषा है। ओहदे की भाषा है, शासन तथा प्रशासन की भाषा है। इसे लैंग्वेज आफ़ पॉवर कहा जाता है। इसलिए सत्ता तथा नौकरशाही के उच्च पायदान पर पहुँचने के लिए अंग्रेज़ी सीखना ज़रूरी है। जिस दिन देश आज़ाद हुआ उसी दिन गांधी जी ने कहा था कि- अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम (अंग्रेज़ी) से दी जाने वाली शिक्षा बंद करा दूँ और सारे शिक्षकों और प्रोफ़ेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूँ। अंग्रेज़ी को ज्ञान की भाषा समझना राष्ट्रीय विपत्ति है। इतिहास में अंग्रेज़ी को विदेशी शासन की बुराइयों में से सबसे बड़ी बुराई माना जाएगा। इसलिए जितनी जल्दी हो भारतीय मानस को विदेशी भाषा के संजाल से मुक्त हो जाना चाहिए।

बाज़ार और हिंदी

कहते हैं, बाज़ार के चलते इलेक्ट्रानिक तथा प्रिंट माध्यमों में हिंदी की उपस्थिति तेज़ी से बढ़ी है। इसमें बहुत हद तक सच्चाई भी है। पत्रकारिता, संचार माध्यमों, व्यावसायिक उद्यमों, विज्ञापनों, चौनलों, वेबसाइटों, इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में हिंदी आज प्रमुखता से उपस्थित है। इन सारे माध्यमों को हिंदी की ज़रूरत भी है क्योंकि उन्हें हिंदी के जरिए खरीददारों और उपभोक्ताओं के पास पहुँचने की ज़रूरत है। एक अनुमान के मुताबिक आज भी इस देश में बमुश्किल 7% लोग अंग्रेज़ी का जीवन जीते हैं। इसलिए बाज़ार से जुड़े ये सारे माध्यम हिंदी का उपयोग कर रहे हैं। हिंदी बाज़ार की भाषा बने, इसमें कोई हर्ज नहीं है। ज़रूरी यह है कि हिंदी रोजी-रोटी, कारोबार की भाषा भी बने। चिंता इस बात की है कि हिंदी का भाषायी स्तर दिनोंदिन गिर रहा है। अंग्रेज़ी के साथ घालमेल करके इसे विरूपित किया जा रहा है। समाचार माध्यमों का जबर्दश्त प्रसार तथा विस्तार हुआ है। लेकिन अफसोस की बात है कि वहाँ पर भाषा का कोई स्तर नजर नहीं आता। लेखन, उच्चारण से लेकर रिपोर्टिंग, सब में दोष हैं। व्याकरण, वर्तनी संबंधी भाषागत दोष बहुत आम हो चले हैं। बल्कि यह कहें कि अब तो इस ओर ध्यान देना भी मुनासिब नहीं माना जाता।

सोशल मीडिया पर लेखकों, कवियों की अनियंत्रित बाढ़ है। हर कोई रचनाकर रहा है। वहाँ न तो कोई किसी को लेखन-कर्म बताने वाला है, न उसकी बारीकियाँ समझाने वाला। बारीकियों को सीखने की आखिर ज़रूरत ही क्या है। वहाँ तो सब विद्वान ही हैं। लेकिन जैसा कि हाल में एक विद्वान ने कहा है कि सोशल मीडिया पर 90 प्रतिशत कूड़ा भरा पड़ा है। नई पीढ़ी शुद्ध, सटीक तथा प्रांजल भाषा के अनुभव से करीब-करीब वंचित है। हिंदी फ़िल्मों के नाम अब अंग्रेज़ी में रखे जा रहे हैं। हिंदी फिल्मों के सितारे फिल्म समारोहों में अकसर अंग्रेज़ी में बोलते नजर आते हैं। बॉलीवुड के अधिकांश कलाकार कथित तौर पर प्रायः रोमन में लिखे संवाद पढ़कर बोलते हैं। विज्ञापन की दुनिया में हिंदी बड़े पैमाने पर प्रिंट तथा इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में यत्र, तत्र, सर्वत्र देखी जा सकती है। इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों, विशेष करके टी.वी. पर वस्तुओं तथा उत्पादों के हिंदी विज्ञापन के वाक्य रोमन लिपि में लिखे जा रहे हैं। एक जमाने में अंग्रेजों ने पूरी कोशिश की थी कि हिंदी की लिपि, देवनागरी की जगह रोमन हो। लेकिन देश के भाषाप्रेमियों के प्रखर विरोध के चलते वे अपनी कुत्सित योजना में सफल न हो सके थे। जो चीज अंग्रेज नहीं कर सके, वह आज़ादी के बाद हमारे बीच के ही अंग्रेज़ीपरस्त इंडियन बखूबी कर रहे हैं। इन विज्ञापनों के जरिए वर्तमान पीढ़ी जिस तरह की हिंदी सीख रही है, वह सही मायने में न तो ठीक-ठाक हिंदी है, और न ही अंग्रेज़ी।

हिंदी - लोक, और तंत्र की

आधुनिक हिंदी का भाषायी विकास पिछले दो सौ वर्षों के दौरान हुआ है। यह खास करके स्वतंत्रता आंदोलन का दौर था। हिंदी से लोगों को बड़ी-बड़ी आशाएं तथा अपेक्षाएँ थीं। उनमें से सबसे बड़ी आकांक्षा एक ऐसे लोकतांत्रिक समाज के निर्माण और विकास की थी जिसकी भाषा हिंदी हो। इसका आशय यह है कि हिंदी को एक बड़े लोकतांत्रिक समाज की जिंदगी, सोच-विचार और रचनाशीलता की भाषा के रूप में विकसित होना था। इसके लिए यह भी ज़रूरी था कि व्यापक हिंदी क्षेत्र के भीतर विभिन्न क्षेत्रों की जो मातृभाषाएँ हैं, उनसे हिंदी का निकट का संबंध हो। तभी हिंदी भाषा पढ़े-लिखे लोगों के साथ-साथ किसान, मज़दूर, खेतिहरों तथा श्रमिकों की जिंदगी की भाषा बन सकती है। यह एक विडंबना है कि जो खड़ी बोली हिंदी, आज़ादी के बाद साहित्य और सरकार के माध्यम से विकसित हुई, वह क्रमशः हिंदी क्षेत्र की लोकभाषाओं से दूर होती गई। इसलिए आज भी भारत के दूर-दराज के गांवों तथा कस्बों के लोग शासन, प्रशासन की हिंदी को अपने करीब नहीं पाते। उन्हें वह प्रशासनिक हिंदी अजनबी-सी लगती है। वे उससे वैसी निकटता अनुभव नहीं कर पाते, जैसी उन्हें अपनी मातृभाषाओं या बोलियों से होती है।

वैश्वीकरण के भाषागत फलितार्थ और राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020

बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने वित्त, वाणिज्य, व्यापार, विनिमय, सब में अंग्रेज़ी को मज़बूत करने में भूमिका निभायी है। समाज में अंग्रेज़ी का प्रभाव बढ़ा है। उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के चलते कहा जाता है कि हिंदी सहित भारतीय भाषाओं की स्थिति वास्तव में कमज़ोर हुई है। कुछ अरसे पहले राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने अपनी सिफारिश में कहा था कि देशभर में बच्चों को पहली कक्षा से अंग्रेज़ी पढ़ाई जाए। यह भारतीय भाषाओं के लिए बेहद नुकसानदायक था। दुनिया के सभी शिक्षाशास्त्रियों ने बुनियादी शिक्षा के लिए मातृभाषा की वकालत की है। लेकिन हमारे देश में आंग्ल भाषा के मोह के चलते यह सर्वमान्य तथ्य को भी नकारने की बात हो रही है। ऐसे में देश के बच्चे अपनी भाषा कब पढ़ेंगे। आज की उच्च शिक्षा अंग्रेज़ी में होती जा रही है। व्यावसायिक पाठ्यक्रम अंग्रेज़ी में ही हैं। विज्ञान, तकनीकी, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, पराचिकित्सा, प्रबन्धन, वित्त, वाणिज्य, सभी के पाठयक्रम अंग्रेज़ी में हैं। भाषाओं को छोड़ दें तो करीब करीब सभी विषयों के शोध एवं विकास का काम अंग्रेज़ी में चल रहा है। देश को आज़ाद हुए 76 साल बीत गए, लेकिन हम अभी तक अपने लिए उच्चशिक्षा का माध्यम अपनी भाषा को नहीं बना सके। यह औपनिवेशिक बोझ को लगातार ढोते जाने जैसा ही है।

इधर एक सुखद बात यह हुई है कि डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्यतः मातृभाषा में दिए जाने की संस्तुति की है। वर्तमान सरकार भारतीय भाषाओं के प्रति सचेष्ट है। उसे अंग्रेजियत के खतरे का आभास है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के मसौदे से फिर से उम्मीद जगी है कि हिंदी सहित दूसरी भारतीय भाषाओं के लिए फिर से नई संभावनाओं के द्वार खुलेंगे। इससे बच्चे शुरू से ही घुटन के माहौल से मुक्त हो सकेंगे। उन्हें कम से कम प्राथमिक स्तर पर लादी हुई भाषा से जूझना नहीं पड़ेगा। लेकिन इसका परिणाम हमें कुछ साल बाद दिखना शुरू होगा जब हम उस पर अमल कर चुके होंगे।

उपसंहार

हिंदी के विमर्शों में ऐसा अकसर कहा जाने लगा है कि हिंदी महज साहित्यिक भाषा बनकर रह गई है। हिंदी में मौलिक तथा नवीन चिंतन, ज्ञान-विज्ञान से संबंधित नवाचार, का काम बहुत कम हो रहा है। समाज-विज्ञान, मानविकी से लेकर प्रकृति विज्ञान तक में किताबों और लेखों का अनुवाद ही दृष्टिगोचर होता है। हिंदी में आज विज्ञान/तकनीकी की पत्रिकाएँ पर्याप्त संख्या में नहीं हैं। समाज-विज्ञान की पत्रिकाएँ भी कम ही हैं। ऐसी स्थिति में हिंदी उच्च शिक्षा का माध्यम नहीं बन पा रही है। इस बारे में चीन और जापान से सीखा जा सकता है कि अपनी भाषा में भी विज्ञान तथा तकनीकी के सभी काम बखूबी किए जा सकते हैं। हमारे देश में जब तक ज्ञान-विज्ञान का काम अंग्रेज़ी में होता रहेगा, तब तक हिंदी विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा की भाषा नहीं बन सकेगी। सरकारी कार्यालयों में हिंदी दिवस मनाने की शुरुआत हुई थी तो उसका मंतव्य था कि सरकारी तंत्र और हिंदीभाषी समाज उसे अपनी जिम्मेवारी के रूप में देंखे। लेकिन अफ़सोस! वह प्रायः वार्षिक रस्म अदायगी का कार्यक्रम होकर रह गया है। यह एक यथार्थ है कि आज अंग्रेज़ी के दबदबे के सामने भारतीय भाषाएँ संघर्ष कर रही हैं।

हिंदी के पक्ष में एक बात मज़बूती से जाती है, वह है देश में हिंदी जानने, समझने तथा बोलने वालों की विशाल आबादी तथा उन हिंदी प्रदेशों का विराट भूभाग। इसके अलावा देश से बाहर दुनिया के तमाम देशों में रह रहे हिंदी के उत्थान के प्रति संकल्पित/कार्यरत लाखों-लाख हिन्दुस्तानी लोग। इसलिए आवश्यक है कि हम ज्ञान-विज्ञान की हर विधा में हिंदी की उपस्थिति के लिए जी जान से काम करें। हमारा हर छोटा बड़ा योगदान हिंदी को बल प्रदान करेगा, उसके उज्ज्वल भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित होगा। जो भी शुभेच्छु जहाँ हैं, जैसे हैं, इस महायज्ञ में अपनी हर संभव हवि दें, तो निश्चित तौर पर हिंदी देश ही नहीं, विदेशों में, तथा संयुक्त राष्ट्र संघ तक में शिखर पर विराजमान होगी।

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र (वैज्ञानिक)
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केंद्र,
टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान
वी. एन. पुरव मार्ग, मानखुर्द,
मुंबई-400088